International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
www.hindijournal.com
Volume 1; Issue 1; November 2015; Page No. 50-52

कविता का आस्था लोक और 'धरती ने दिये हैं बीज' संकलन

डॉ. नन्दकिशोर मौर्य
प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, गौरीदेवी राजकीय महिला महाविद्यालय, अलवर, राजस्थान, भारत

सारांश
आज की कविता के परिदृश्य में जब चारों ओर 'कविता में समय', 'कविता और हमारा समय' तथा 'समय, हम और कविता' जैसे पदबन्धों की आड़ में भारी–भरकम सिद्धान्तों का शोर मचा हो, शासकीय और कार्पोरेट जगत के 'साहित्यिक?'समारोहों में कविता रचाव के फ्रेम गढ़े जा रहे हों, ऐसे गड्डमड्ड समय में अशोक चन्द्र जैसे कुछ ही कवि हैं जो अकादमिक जड़ता को तोड़ कर कविता में जीवन की सचाई को पिरोने की पुरजोर कोशिश में लगे हुए हैं। यही कारण है कि युग की खुरदरी और सख्त स्थितियों का खुलासा करते समय कवि थोड़ा आक्रामक और बेचैन हो जाता है। शायद यही वजह है कि आलोचक अनिल सिन्हा ने अशोक चन्द्र की कविता पर विचार करते हुए उन्हें बदहवास समकालीन कवियों की पंक्ति में रखा है।
अशोक चन्द्र की कविता का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है स्त्री की उपस्थिति ! अशोक चन्द्र की कविता में बाज़ार और उसकी राक्षसी शक्तियों के प्रभाव में पूरी दुनिया को दिखाया गया है। पाखण्ड, आडम्बर, अध्यात्म और अंधविश्वासों ने मनुष्य के विवेक को हमेशा कुंद करके रखा है। ईश्वरीय सत्ता और उससे जुड़े अंधविश्वासों ने सृष्टि के आरंभ से ही शोषण और अनाचार के अवसरों को फलने–फूलने का पूरा अवसर दिया है। अशोक चन्द्र की कविता इस बात का खुलासा करती है कि पूंजी और मुनाफा केंद्रित जीवन की यांत्रिकता ने मनुष्य की रागात्मक और कलात्मक संवेदना को आहत किया है।

मूल शब्दः पत्रिका, कविता, सांप्रदायिकता, रचना, साहित्य, समकालीनकविता, संस्कृति, सजगता, धर्म सृजन, दृष्टिकोण, स्त्री, विमर्श.

आज की कविता के परिदृश्य में जब चारों ओर 'कविता में समय', 'कविता और हमारा समय' तथा 'समय, हम और कविता' जैसे पदबन्धों की आड़ में भारी–भरकम सिद्धान्तों का शोर मचा हो, शासकीय और कार्पोरेट जगत के 'साहित्यिक?' समारोहों में कविता रचाव के फ्रेम गढ़े जा रहे हों, ऐसे गड्डमड्ड समय में अशोक चन्द्र जैसे कुछ ही कवि हैं जो अकादमिक जड़ता को तोड़ कर कविता में जीवन की सचाई को पिरोने की पुरजोर कोशिश में लगे हुए हैं। यही कारण है कि युग की खुरदरी और सख्त स्थितियों का खुलासा करते समय कवि थोड़ा आक्रामक और बेचैन हो जाता है। शायद यही वजह है कि आलोचक अनिल सिन्हा ने अशोक चन्द्र की कविता पर विचार करते हुए उन्हें बदहवास समकालीन कवियों की पंक्ति में रखा है। सही भी है, कोई भी संवेदनशील और खुली आंखों वाला (विजेन्द्र के शब्दों में विजनरी) रचनाकार इस क्रूर समय में 'सहवास' होकर रचना नहीं कर सकता। 'सहवासी' में सुलगते जलते हाहाकार करते जीवन की रचना नहीं हो सकती। बदहवासी इस वक्त की फिज़ाओं में है और अशोक चन्द्र कविता के बहाने से अपने वक्त को रचने की कोशिश में लगे हैं इसलिए उनका बदहवास होना उनकी कविता के लिए खतरा नहीं है। वस्तुतः यह बदहवासी विकृति नहीं है कवि के संवेदन– व्यापार का प्रसार है जिसकी बानगी उनके इस प्रथम कविता संकलन 'धरती ने दिये हैं बीज' में मिलती है। यकीनन इसी के आधार पर अशोक चन्द्र मनुष्य के हालातों से लड़ने के लिए ऊर्जा ग्रहण करता है।

कवर पर कवि अशोक चन्द्र का परिचय पड़कर एकाएक लगता है कि वे एक जबरदस्त सैद्धान्तिक और अकादमिक आदमी हैं। उनका हस्तक्षेप जहां–जहां भी है वहां सिद्धान्तों की अखाड़ेबाजी की बहुत अधिक गुंजाइश है। पर कविता दर कविता यह बात खुलकर सामने आने लगती है कि विचारधारा की यांत्रिकता और जड़ता से उन्होंने खुद को बचाए रखा है। तमाम आक्रोश, खीज, उत्तेजना और बेचैनी के बाद भी संवेदना के धरातल पर वे बहुत आत्मीय और जीवन के प्रति आस्थावान रचनाकार हैं। उनके सृजन की आस्था उस आदमी पर टिकी है जिसको दुनिया के दादाओं ने अपना गुलाम बना रखा है। एक प्रकार से दुनिया के दादाओं की हार और गुलाम आदमी की जीत अशोक चन्द्र का रचनात्मक लक्ष्य है। इसी के साथ जुड़ी हैं वे तमाम संवेदनात्मक और कलात्मक ऊंचाइयां जिनको 'धरती ने दिए हैं बीज' संकलन में अशोक ने अर्जित किया है। जीवट इस गुलाम आदमी की शक्ति है जिसके सहारे वह अपनी लड़ाई लड़ रहा है। इस गुलाम आदमी की जिजीविषा से बड़ी दुनिया के ठेकेदार भयभीत हैं और वे इस आदमी के जीवट को ही तोड़ देना चाहते हैं क्योंकि–

'कमजोर हो सकते हैं वे
तो केवल जीवट में
जिस पर अभी तक
गुलाम आदमी की लड़ाई टिकी है,'

कवि जानता है कि दुनिया के ये दादा अपनी जरूरतों के दास हैं– 'एक दिन चातुर्य उनका चुक जायेगा। सह नहीं पायेगा चोट
गुलाम आदमी के लड़ाकूपन की असमर्थ होकर वे हारेंगे
एक दिन वे हारेंगे।'[3]

अशोक चन्द्र की कविता का पाट निरन्तर पसरता हुआ है। उनकी अनेक कविताएं उनकी आने वाली कविताओं की सुगबुगाहट का एहसास कराती हैं। यहां कवि अपनी कविता की शक्ति का एहसास करवा देता है। उनके चिन्तन की जद में मनुष्य और उसके जीवन की बहुरंगी विविधता है। इसी विविधता से उनकी कविता का लोक रचा गया है जहां 'मां बनती हुई लड़की' की नारी सुलभ हया है, 'गोरू चराता हुआ बुधना है', अहंकार की ऐंठ में 'बारूद पर बैठा आदमी है', किफायत से घर चलाती हुई पत्नी है और कुम्हलाते जाने के बाद भी सूर्य–मुखी आभा बिखेरती हुई मां है। इन सब के जीवन की सचाई रचते हुए अशोक चन्द्र का संवेदनशील मन बच्चों के क्रिया–कलापों पर भी ठिठकता है। बच्चे उनके लिए बदलते हुए 'समय' का संकेतक हैं। समय का बदलाव बच्चों की सहज क्रियाशीलता को किस तरह बाधित करता है, किस तरह उनके कोमल मन पर समय की क्रूरता की छाप पड़ती है और वे समय के बदलाव को भांपकर क्या प्रतिक्रिया करते हैं इनकी छोटी–छोटी किन्तु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण छवियां अशोक चन्द्र ने उकेरी हैं। 'बच्चे चुप हैं' कविता में बच्चों की चुप्पी को लक्षित कर कवि कहता है–

बच्चों की इस खौफनाक चुप्पी से मैं घबराया हूं,
और
बच्चे चुप हैं।[4]

इतना होने के बाद भी डरे–सहमे गोपनीय शब्दों का अर्थ खोजकर बड़े होते बच्चे आने वाले सुखद कल के अंकुर भी तो हैं। एक सजग रचनाकार स्वप्न दृष्टा और आस्थावान होता है। जीवन की परिस्थितियों से ही वह भविष्य को लक्षित कर लेता है इस दृष्टि से अशोक चन्द्र के प्रयत्न सार्थक हैं। उन्होंने बच्चों को लक्षित करके भविष्य के प्रति अपनी प्रगाढ़ आस्था प्रकट की है। उनका मानना है कि बच्चे हमेशा प्रयत्नशील रहते हैं, 'वे कभी भी चैन से नहीं बैठेंगे–

ये थक जाएं
खप जाएं याकि गुम हो जाएं
लेकिन रहेंगे वे हमेशा ही प्रयत्नशील, वे रहेंगे युद्धरत
हमेशा–हमेशा '[5]

अशोक चन्द्र की कविता का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है स्त्री की उपस्थिति ! जो न तो किसी दबाव में हुई है न किसी नारे के रूप में उनके यहां स्त्री सहज और चिन्तालू है जो कभी मां के रूप में बच्चे के बारे में चिंतित है तो कभी पत्नि के रूप में हमेशा किसी अनिष्ट की आकांक्षा में घिरी रहती है और उसी भविष्यत् अनिष्ट का सामना करने के लिएकृ

'खुद अपने हाथ में आ गए पैसे को वे छिपा लेती हैं
किसी सुरक्षित कोने में
कि काम आएंगे वे सब
उस बुरे वक्त में, जिसके खौफ में वे हर दम रहती हैं।'[6]

मां एक संस्कृति होती है, मनुष्य के संपूर्ण व्यक्तित्व की आधारशिला भी। इस लिए कवि ने मन की सारी कोमलतम अभूतियों को संजोकर मां के लिए जो बिंब रचा है वह अनूठा है–

'जो भी कुछ
कर रही हो मां, इस वक्त
कुम्हलाते जाने के बाद भी
जब भी हंसेगी
सूर्यमुखी – आभार.....' [7]

अशोक चन्द्र की कविता में बाज़ार और उसकी राक्षसी शक्तियों के प्रभाव में पूरी दुनिया को दिखाया गया है। कैसे–कैसे और किस–किस क्षेत्र में बाज़ार की घुसपैठ हो सकती हैं कवि ने इसकी आशंका भी व्यक्त की है। पिछले कुछ वर्षों से पेटेंट पर कार्पोरेट जगत ने अपनी कुदृष्टि गड़ा रखी है। इस चिन्ता को लेकर सृजन में जो विचार आए हैं 'धरती ने दिए हैं बीज' कविता में उनका खुलासा हुआ है। बीज मनुष्यता के लिए जीवन है, सृजन की प्रेरणा और मनोबल है पर बीज का पेटेंट करके धरती के दिए हुए बीज को ये लोग हथियाने की होड़ में लगे हैं। कवि ने इसे बड़ी चिन्ता के रूप में सामने रखते हुए संकेत किया है कि पूंजी और बाजार ने मनुष्य जीवन के सांस्कृतिक बोध को लगभग तोड़कर रख दिया है। मक्कारी और चालाकी ने रोटी और उससे जुड़े स्रोतों में भी सेंध मारने की जुगत बैठा ली है–

'वे चाहते हैं कृषि के अन्दर
पूंजी का प्रवेश हो
और जनता की रोटी के
आदि स्त्रोत को भी
सत्ता के एकाधिकार के
अन्दर लाया जा सके।'[8]

देशी सामन्तवाद पूंजीवाद तथा विदेशी पूंजीवाद व साम्राज्यवाद ने इस देश को वर्षों छला है। अब राजनीतिक शातिरपना भी इनके साथ मिल गया है। ऐसे में पेटेंट की आड़ में मनुष्य के जीने की संभावनाओं को भी अपनी गिरफ्त में लेकर पूंजी की ताकत और राजनीतिक मक्कारी का नया खेल हमें कहां ले जाना चाहता है कवि इस खतरे की ओर हमारा ध्यान 'गोरु चराता है बुधना', 'इस सदी का अंतिम विमर्श', 'बारूद पर बैठा आदमी', 'धरती ने दिए हैं बीज' कविताओं के आधार पर खींचना चाहता है।
पाखण्ड, आडम्बर, अध्यात्म और अंधविश्वासों ने मनुष्य के विवेक को हमेशा कुंद करके रखा है। ईश्वरीय सत्ता और उससे जुड़े अंधविश्वासों ने सृष्टि के आरंभ से ही शोषण और अनाचार के अवसरों को फलने–फूलने का पूरा अवसर दिया है। रही सही कसर शासक वर्ग ने पूरी कर दी। उसने पुरोहित वर्ग से साठगांठ करके शोषित– आहत जनता के विद्रोह के स्वर को दबाने के लिए धर्म और अध्यात्म का सहारा लिया है। कवि अशोक चन्द्र ने इसी पाखण्ड का खुलासा करने के लिए कुछ लोक प्रचलित आस्थाओं, मान्यताओं और विश्वासों की पड़ताल की है। 'आपसे पार पाना मुश्किल है' और 'इस भयावह समय में' कविताओं में कवि ने इसी ओर इशारा किया है कि किस तरह इन विश्वासों में उलझाकर जनता के साथ विश्वासघात किया जाता है–

'जब हम
सद्भाव के प्रचार–प्रसार में व्यस्त थे
वे सेंध लगा रहे थे धर्म ग्रंथों में
सीख रहे थे कला
ऋषि मुनियों और संतों के उपदेशों से
जनता को बहलाने की'[9]

आशंकाएं कवि के भावजगत पर निरन्तर प्रहार करती रहती हैं इससे कवि तार्किकता और यौद्धिकता की और पहलकदमी करता हुआ इसी आवेश में मनुष्यता पर मंडराते हुए खतरे को भांप कर ईश्वर के अस्तित्त्व को भी नकार देता है। अशोक चन्द्र का कवि इस सचाई को जानता है कि ईश्वर वह सुविधा है जिसे सदियों से शोषण और अनाचार के औजार के रूप में काम में लिया जाता रहा है। इससे अधिक ईश्वर का अस्तित्व कुछ भी नहीं है–

'लेकिन आपका खुदा
हत्यारों, लुटेरों और अपराधियों का
कुछ भी टेढ़ा नहीं करता, दुनिया की गरीबी, अन्याय और
शोषण से, उसे कुछ भी नहीं लेना–देना।'[10]

अशोक चन्द्र की कविता इस बात का खुलासा करती है कि पूंजी और मुनाफा केंद्रित जीवन की यांत्रिकता ने मनुष्य की रागात्मक और कलात्मक संवेदना को आहत किया है। वैज्ञानिक और तकनीकी विकास मनुष्य की सुविधा और सुरक्षा के लिए किया गया प्रयास है लेकिन उन पर भी पूंजी की कब्जेदारी कायम हो गई है कार्पोरेट जगत ने इन्हें अपने कब्जे में लेकर इनका मनचाहा उपयोग करना आरंभ कर दिया है। विकास की इस दौड़ में हमारे पर्यावरण पर विषैला आवरण छाने लगा है। 'धरती ने दिये हैं बीज' संकलन की कविताओं में कवि 'समय' के वातायन से इन सब स्थितियों का कई–कई कोणों से विवेचन करके आशंकित होता है और प्रश्न करता है कि–

'क्या अब केवल मुनाफा तय करेगा
प्रजातियों की उम्र?[11]

प्रजातियों पर मंडराते इस खतरे को भांपकर कवि मानवीय संबंधों की तह तक जाने की बार–बार कोशिश करता है। गांव और उसका सांस्कृतिक रचाव कवि की स्मृतियों में अभी भी रड़कता है, अभी भी कवि का गंवई मन गांव की आबो–हवा में सांस लेने की लालसा में स्मृतियों में ही सही, गांव हो आता है। चिट्ठी–पत्री के माध्यम से भी कवि गांव की हलचल को जानने के लिए बेचैन है। इस बेचैनी में अशोक चन्द्र की लोकजीवन के प्रति गहरी आसक्ति भी व्यक्त होती है। 'बदलते हुए' कविता में उन्होंने लिखा है–

"पूरे की भैंस ब्यायी कि नहीं?
सलीम चाचा की मुर्गियां कैसी हैं ?
बड़की काकी का सोंटा ?
जिन्दा है या..... [12]

लेकिन कवि जानता है गांव अब पहले के से गांव नहीं रहे। समय की मार ने वहां भी बहुत कुछ तोड़–फोड़ दिया है। पूंजी और बाजार की अपसंस्कृति यहां भी सिर चढ़ने लगी है। मकारी, स्वार्थ और क्रूरता ने यहां भी पांव पसार लिए हैं। संकलन की कविताओं में कवि ने इसे पीड़ा के साथ व्यक्त किया है। इसके बाद भी कवि आशावान है और निरन्तर सपने सिरजता रहता है–

"इस बुरे समय में भी
सचमुच कितना आश्चर्यजनक होगा किसी बीज का छिटक कर
दूर बिखर जाना
और ले लेना अंकुर
जहां भी मिल जाए उसे
थोड़ी सी हवा,
थोड़ा सा पानी।'[13]

अशोक चन्द्र का यह विश्वास तमाम आशंकाओं के बावजूद उनकी कविता की शक्ति और लक्ष्य है जो उनकी कविता में आस्था के बीज उपजाता है।

संदर्भ सूचि

1. विजेन्द्रः कृतिओर, अंक 32; सं. विजेन्द्र संपादकीय पृष्ठ–3.
2. अशोक चन्द्रः धरती ने दिये है बीज, कविता संग्रह प्रकाशक अनिमेष फाउन्डेशन, लखनऊ, पृष्ठ–71
3. अशोक चन्द्रः धरती ने दिये है बीज, कविता संग्रह प्रकाशक– अनिमेष फाउन्डेशन, लखनऊ, पृष्ठ–72
4. अशोक चन्द्रः धरतों ने दिये है बीज, कविता संग्रह प्रकाशक– अनिमेष फाउन्डेशन, लखनऊ, पृष्ठ–25,
5. अशोक चन्द्रः धरती ने दिये हैं बीज, कविता संग्रह प्रकाशक अनिमेष फाउन्डेशन, लखनऊ, पृष्ठ–51
6. अशोक चन्द्रः धरती ने दिये हैं बीज, कविता संग्रह प्रकाशक– अनिमेष फाउन्डेशन, लखनऊ, पृष्ठ–47
7. अशोक चन्द्रः धरती ने दिये हैं बीज, कविता संग्रह प्रकाशक– अनिमेष फाउन्डेशन, लखनऊ. पृष्ठ–63
8. अशोक चन्द्रः धरती ने दिये है बीज, कविता संग्रह प्रकाशक अनिमेष फाउन्डेशन, लखनऊ, पृष्ठ–92
9. अशोक चन्द्रः धरती ने दिये हैं बीज, कविता संग्रह प्रकाशक– अनिमेष फाउन्डेशन, लखनऊ, पृष्ठ–76
10. अशोक चन्द्रः धरती ने दिये हैं बीज, कविता संग्रह प्रकाशक– अनिमेष फाउन्डेशन, लखनऊ, पृष्ठ–18
11. अशोक चन्द्रः धरती ने दिये हैं बीज, कविता संग्रह प्रकाशक– अनिमेष फाउन्डेशन, लखनऊ, पृष्ठ–93
12. अशोक चन्द्रः धरती ने दिये हैं बीज, कविता संग्रह; प्रकाशक– अनिमेष फाउन्डेशन, लखनऊ, पृष्ठ–52
13. अशोक चन्द्रः धरती ने दिये हैं बीज, कविता संग्रह प्रकाशक– अनिमेष फाउन्डेशन, लखनऊ, पृष्ठ–34